नागपुर, सोमवार, 5 जून 2017

# लोकमत समाचार

## परिवेश और जीवन में संतुलन हो

गिरीश्वर मिश्र
कुलपति, महात्मा गांधी अंतर्राष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
misragirishwar@gmail.com

हम सब लोग जीवन को सबसे ज्यादा प्यार करते हैं, खास तौर पर अपने जीवन को. जीवन को परिभाषा में बांधना मुश्किल है. मोटे तौर उसे कुछ इस तरह समझ सकते हैं कि वह एक अदृश्य, पर सतत उपस्थित रहने वाली समग्र सक्रियता की स्थिति है जो पूरे अस्तित्व पर छाई रह कर भी कहीं एक जगह स्थापित नहीं की जा सकती. वह बहुमूल्य ही नहीं अमूल्य है क्योंकि उसका प्रत्यारोपण नहीं किया जा सकता. उसका कोई विकल्प है ही नहीं. यह प्राण शक्ति के रूप में जाना जाने वाला जीवन हमें किसी अदृश्य शक्ति से उपहार में मिला हुआ है.

थोड़ा और ध्यान दें और विचार करें तो यह भी स्पष्ट हो जाता है कि जीवन की शक्ति निजी होने पर भी स्वयं में अपर्याप्त होती है क्योंकि इसका होना और बातों के होने पर निर्भर करता है. यह पूरी तरह से स्वायत्त नहीं है. हम जो वायु, अन्न, जल और विचार अपने परिवेश से पाते हैं और जो आचरण करते हैं उसी से जीवन निर्मित होता है, टिकता है. जब इन स्रोतों की कमी होने लगती है तो जीवनी शक्ति क्षीण होने लगती है. अंततः यह अलौकिक उपहार हमारे हाथ से जाता रहता है. इस तरह जीवन हमारा तो होता है परंतु उसका होना या उसका विस्तार स्वतंत्र न होकर पूरी तरह से हमारे अपने परिवेश पर ही निर्भर करता है. परिवेश ही जीवनदायी है. एक तरह से यह जीवन का पर्याय है क्योंकि बिना उसके जीवन संभव नहीं होता.

लोभ के वश में आकर हम यह भूल जाते हैं पूरी सृष्टि ही एक प्राणी की तरह है और उसका भी जीवन है जिसमें सबका जीवन समाया हुआ है. सृष्टि के जीवन से परे कुछ भी नहीं है. जिस अबाध गति से किस्म-किस्म का कूड़ा-कचरा हम पैदा कर रहे हैं और प्रदूषण फैला रहे हैं, उससे धरती रहने योग्य नहीं बचेगी. इसी तरह अवांछित गैसों के लगातार उत्सर्जन से वायुमंडल प्राणदायी वायु से शून्य हो जाएगा और जीवन संकट में पड़ जाएगा. ज्यादा दिन नहीं हुए जब हम अपनी आदतों में परिवेश के प्रति संवेदनशील थे. मसलन घर से कपड़े के झोले में बाजार से सामान लाते थे, पैदल या साइकिल पर ज्यादा चलते थे, ज्यादातर सूती कपड़े पहनते थे और उतने ही कपड़े और जूते रखते थे जितने जरूरी होते थे. जरूरत और फिजूलखर्ची के बीच स्पष्ट विभाजक रेखा थी. पर आज प्रगति के छलावे में सुख-सुविधा का तोहफा महंगा पड़ रहा है. सुख को बढ़ाते जाने का दबाव उन्नति का लक्षण हो गया है. अब चीजें बेकार नहीं होतीं. वे फैशन से बाहर हो जाती हैं इसलिए उन्हें 'रिटायर' कर दिया जाता है. पर दूर और निकट की हमारी दृष्टि में संतुलन नहीं बैठ पा रहा है और हम यह नहीं देख पा रहे हैं कि थोड़े से तात्कालिक फायदे के लिए दूर का बड़ा नुकसान हो रहा है. हमें आधी-अधूरी नहीं, पूरी सृष्टि को ध्यान में रख कर मंजिल तय करनी होगी.

सोमवार
५ जून २०१७
सकाळ

## बालरंग, नाट्य, चित्रकला प्रशिक्षण कार्यशाळा

वर्धा, ता. ४ : महात्मा गांधी आंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालयातील जनसंपर्क कार्यालय, युवक बिरादरी आणि नीळकंठ अकादमी ऑफ सोशल एक्टिविटी यांच्या वतीने १० ते २२ जूनदरम्यान, ५ ते १५ वयोगटातील मुला-मुलींकरिता 'बालरंग नाट्य, नृत्य आणि चित्रकला प्रशिक्षण कार्यशाळेचे आयोजन करण्यात येत आहे.

कार्यशाळेची वेळ दुपारी ४ ते सायंकाळी ७ वाजतापर्यंत राहील. विश्वविद्यालयाच्या हबीब तन्वीर सभागृहात ही कार्यशाळा घेण्यात येणार असून यात मुलांना विविध प्रशिक्षकांकडून नाटक, नृत्य आणि चित्रकलेचे प्रशिक्षण दिले जाणार आहे. कार्यशाळेच्या समारोपीय कार्यक्रमात मुलांचा कार्यक्रम सादर करण्यात येईल.

सर्व सहभागी मुलांना प्रमाण पत्र दिले जातील. कार्यशाळेत भाग घेण्याचे आवाहन संयोजक बी. एस. मिरगे आणि शिवम घाटे यांनी केले आहे.

सोमवार दि. ५ जून २०१७

लोकमत

**श्रमदानाकरिता एकवटले वर्धेकर :** ३०० संवेदनशील व्यक्तींचा सहभाग; जिल्हाधिकाऱ्यांसह शिक्षक हजर

# आयटीआय टेकडीवर महाश्रमदानातून वृक्षारोपणाकरिता २००० खड्डे तयार

लोकमत न्यूज नेटवर्क

**वर्धा :** म्हाडा कॉलनी जवळील आयटीआय टेकडी परिसरात महावृक्षारोपणाची आवश्यक पुर्वतयारी म्हणून निसर्ग सेवा समिती, जिल्हाधिकारी कार्यालय, उपवनसंरक्षक कार्यालयाच्या पुढाकाराने रविवारी महाश्रमदानाचे आयोजन करण्यात आले होते. याला वर्धेकरांनी प्रचंड प्रतिसाद दिला. सुमारे ३०० नागरिकांनी स्वत: फावडे, कुदळ आणून सहभाग दिला. सकाळी ६ वाजतापासून सुरु झालेल्या या महाश्रमदानातून २००० खड्डे खोदण्यात आले.

आजच्या महाश्रमदानात महिलांचा बहुसंख्येने सहभाग होता. श्रमदानात जिल्हाधिकारी शैलेश नवाल, खा. रामदास तडस यांनी स्वत: हातात कुदळ, फावडे घेवून खड्डे केले तर वर्धेचे उपवनसंरक्षक दिगंबर पगार, तहसीलदार राऊत देखील सहभागी झाले. श्रमदानात जिल्हाधिकारी कार्यालयातील कर्मचारी, पुनर्विभागातील कर्मचारी, देखील संख्येने सहभागी झाले होते. वर्धा शहराला हिरवेगार करण्यात वर्धेकरांचा हा उत्साह अधोरेखित करणारा ठरला. जागतिक पर्यावरण दिनाच्या पूर्व केलेल्या या महाश्रमदानातून तयार करण्यात आलेल्या खड्ड्यांत १ ते ७ जूले दरम्यान काळी माती भरुन, वृक्षारोपण करण्यात येणार आहे. याच परिसरात निसर्ग सेवा समितीद्वारे वर्ष २००० मध्ये ८०० वृक्षरोप लावून त्याचे संगोपण गत १७ वर्षांपासून सुरु आहे. या पुढेही सर्व श्रमदानकर्त्यांची एक प्रकाराने आमची जबाबदारी वाढविली असून पुढील वृक्षारोप लागवड व त्याचे संवर्धन योग्य पद्धतीने होईल असा विश्वास निसर्ग सेवा समितीचे अध्यक्ष मुरलीधर बेलखोडे यांनी यावेळी व्यक्त केला.

श्रमदान करुन खड्डे करताना वर्धेतील नागरिक.

या प्रसंगी निसर्ग सेवा समितीद्वारे निसर्ग संदेशचे प्रकाशन जिल्हाधिकारी नवाल, खा. तडस व उपवन संरक्षक दिगंबर पगार यांच्या हस्ते करण्यात आले. पाहुण्यांच्या हस्ते आयटीआय टेकडीवर जाणाऱ्या रस्त्याच्या कडेला १५ रोपटी लावण्यात आली. लावण्यात आलेली रोपटी वृक्षसंरक्षक अनिल पटेल, डॉ. राजेंद्र बोरकर, गोपी मते, डॉ. रंभा सोनाये, इमरान राही, निळकंठ पिसे यांनी दिली.

आजच्या महाश्रमदानात हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा बहार नेचर फाउंडेशन, आपले सरकार, आचारवड, श्रमीक पत्रकार संघ, शासकीय औद्योगिक प्रशिक्षण संस्था, विद्यार्थी, वैद्यकीय जनजागृती मंच, जनहित मंच, सक्षम वर्धा, युवा सोशल फोरम, वर्धा सोशल फोरम, राष्ट्रसेवा दल वर्धा, उपअधीक्षक पोलीस विभाग निवृत्त पोलीस ऑफिसर्स, कर्मचारी वर्धा जिल्हा, विवेकानंद केंद्र, गुरुदेव सेवा मंडळ, निवृत्त अभियंता संघ, प्राथमिक शिक्षक समिती तसेच अधिकारी कर्मचारी व सामाजिक संघटनासह, संवेदनशील नागरिकांचा उत्स्फूर्त प्रतिसाद मिळाला.

लोकरंग
लोकमत समाचार रविवार 4 जून 2017

# लखनऊ का सामाजिक और सांस्कृतिक चित्रण

## पुस्तक समीक्षा

– कृपाशंकर चौबे

वाणी प्रकाशन से अभी-अभी एक बहुत महत्वपूर्ण किताब प्रकाशित हुई है:दूसरा लखनऊ. इस किताब के पहले लखनऊ पर जितनी किताबें आई थीं, उनमें मुख्यत: 1857 के मुक्ति संग्राम, ऐतिहासिक इमारतों, नवाबों और उनकी जीवनशैली पर ही जोर दिया गया और लखनऊ को सिर्फ उसकी सामंती विरासत से जोड़कर देखा गया. लखनऊ के कोठों, मुर्गेबाजी, बेशुमार निकाहों को महिमामंडित किया जाता रहा. किंतु समाज विज्ञानी नदीम हसनैन की किताब 'दूसरा लखनऊ' अतीत से जूझते एक शहर का ऐसा समाज शास्त्रीय चित्रण है जिसमें लखनऊ के वर्तमान से मुठभेड़ है. ऐसा करते हुए लेखक ने अतीत को भुलाया नहीं है क्योंकि यादों का पूर्ण विलोप किसी भी शहर के चरित्र को बिगाड़ सकता है. इसलिए पुस्तक के पहले ही अध्याय में लखनऊ का एक संक्षिप्त सांस्कृतिक इतिहास प्रस्तुत किया गया है. उसमें यह बताया गया है कि लखनऊ में किस तरह के सांस्कृतिक तंत्र विकसित हुए. उसकी वजहें क्या थीं? सामाजिक ताने-बाने के अध्याय में हिंदू-मुस्लिम जातियों, व्यावसायिक समूहों, कायस्थ व वाजपेयी ब्राह्मण, धार्मिक व अल्पसंख्यक समुदाय का विवरण दिया गया है. शियों की दुनिया शीर्षक अध्याय में उनकी जनसंख्या, पर्वों, मदरसों, प्रकाशन, यतीमखानों, शैक्षणिक संस्थानों, मोहर्रम और अजादारी का वर्णन किया गया है. चौथे अध्याय में लखनऊ के मुहल्लों, मंडियों, गलियों, सड़कों और बाजारों का विवरण दिया गया है. उसके बाद के अध्याय का शीर्षक है: अधीनस्थ व हाशिए पर रहनेवाले समूह. लखनऊ में हाशिए के लोगों की अच्छी खासी आबादी है किंतु उन पर कभी कुछ नहीं लिखा गया. जो ब्रास बैंड प्लेयर हैं, उनकी जिंदगी में कितने गम हैं पर वे दूसरे की शादी में झूम-झूमकर बैंड बजाते हैं. इसी तरह जो कनमैलिए और मालिशिए लखनऊ में आज भी दिख जाते हैं, उनके बारे में भी नदीम हसनैन ने लिखा है. वे यह भी बताते हैं कि लखनऊ के फेरीवाले दूसरी जगहों से एकदम अलग हैं. गरसाल और गोरकन (मुर्दे को गुस्ल देनेवाले और कब्र खोदनेवाले) के बारे में नदीम हसनैन बताते हैं कि लखनऊ के समाज में इनका क्या दखल है. हाशिए के अन्य समूहों-कहार, इक्का-तांगा चालक, कबाड़ी व कचरा उठानेवाले, संपेरे, झुग्गीवासी, हिजड़े, भांड़ व नक्काल, रिक्शा चालक, फेरीवाले, सफाई कर्मचारी व मेहतर जैसे हाशिए के लोग भी तो लखनऊ को बनाते हैं, इस पर भी लेखक रोशनी डालता है. पुस्तक में लखनऊ के प्रतीक स्थलों, मेलों-त्यौहारों, धार्मिक व आध्यात्मिक केंद्रों, कला व शिल्प, लुप्तप्राय हुनर, व्यंजन व पाक कला पर अलग-अलग अध्यायों में विचार किया गया है. लखनऊ में दूसरे राज्यों से आए लोगों के जीवन संग्राम पर प्रकाश डाला गया है तो परिवर्तनशील लखनऊ का चित्रण भी किया गया है. आज का लखनऊ: दलित कल्पनाएं शीर्षक लेख बिल्कुल नया विमर्श है.

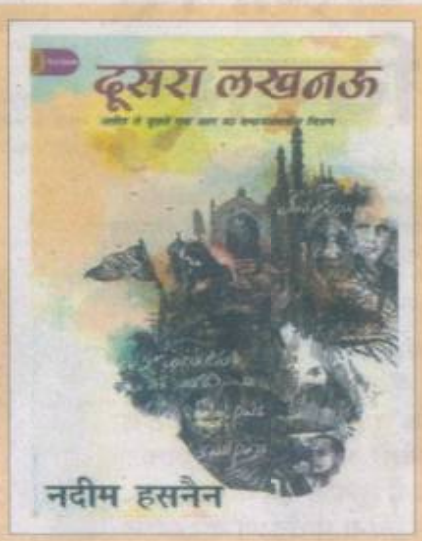


एक स्वतंत्र अध्याय में संगीत, गायन और नृत्य में लखनऊ के अवदान का विवेचन किया गया है. इसमें गायन के लखनऊ घराने, तबला परंपरा, सितार परंपरा, कत्थक नृत्य के लखनऊ घराने का विस्तार से वर्णन किया गया है. एक दूसरे अध्याय में रामलीला, कव्वाली और रंगमंच का वर्णन भी किया गया है. इसी अध्याय में नदीम हसनैन दास्तानगोई का विवरण देते हैं. दास्तानगोई उर्दू में दास्तान यानी लंबी कहानियां सुनाने की कला है.

पुस्तक का एक अत्यंत महत्वपूर्ण लेख है: लखनऊ में उर्दू. इसमें सौदा, मीर हसन, कलंदर बख्श जुर्रत, इंशा अल्लाह खान इंशा, मुसहफी, आतिश, दयाशंकर नसीम, मिर्जा शौक, मुहम्मद खान रिंद जैसे शायरों से लेकर आजादी के बाद के शायरों के रचनात्मक अवदान का वर्णन किया गया है. लखनऊ में मसनवी, मर्सिया और रेख्ती की परंपरा पर भी प्रकाश डाला गया है और सआदत यार खान रंगीन, इंशा, जान साहेब, हबीब नाजनीन, सजनी लखनवी, यास यगाना चंगेजी और मजाज की रचनाओं का मूल्यांकन किया गया है. लखनऊ की उर्दू पत्रकारिता पर भी प्रकाश डाला गया है और नवल किशोर प्रेस के योगदान को खास तौर पर रेखांकित किया गया है.

पुस्तक का एक अन्य महत्वपूर्ण अध्याय है: साझी संस्कृति एवं सांप्रदायिक सद्भाव. उसमें लेखक ने बताया है कि अवध के नवाबों ने कैसे हिंदुओं के त्यौहारों को संरक्षण दिया. लेखक ने इस संदर्भ में मीर को उद्धृत किया है: होली खेलें आसफुद्दौला वजीर, रंग सोहबत से खफ्र्द ओ पीर. हिंदू-मुस्लिम एकता की तरह उर्दू-हिंदी की साझी परंपरा सैकड़ों साल पुरानी है. कुल मिलाकर लखनऊ के समाज और संस्कृति को समझने के लिए 'दूसरा लखनऊ' एक अनिवार्य संदर्भ ग्रंथ है.

प्रोफेसर नदीम हसनैन हिंदी,अंग्रेजी तथा उर्दू तीनों भाषाओं पर समान अधिकार रखते हैं. नदीम हसनैन पेशे से शिक्षक रहे हैं. उन्होंने लगभग चार दशकों तक लखनऊ में अध्यापन किया. लखनऊ विश्वविद्यालय में मानव शास्त्र के प्रोफेसर तथा विभागाध्यक्ष पद से सेवानिवृत्त होने के बाद लखनऊ में रहकर स्वतंत्र लेखन कर रहे हैं.